

श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग और आधुनिक हिंदी कविता (माखनलाल चतुर्वेदी, दिनकर और गुप्त जी के विशेष संदर्भ में)

अवनीश तिवारी (शोध छात्र)
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
ई - मेल tiwariavanish108@gmail.com

डॉ० मनोज कुमार यादव
असि. प्रोफेसर (हिंदी विभाग)
डी. ए. वी. डिग्री कॉलेज, लखनऊ।
Yadavmanojkumar031@gmail.com

शोध सार

श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित कर्मयोग का सिद्धांत केवल एक धार्मिक-दार्शनिक उपदेश नहीं है, अपितु मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सक्रिय, निष्काम और कर्तव्यनिष्ठ आचरण की आधारशिला है। आधुनिक हिंदी काव्य ने, विशेषतः राष्ट्रीय जागरण के युग में, इस दर्शन से गहरी प्रेरणा ग्रहण की। प्रस्तुत शोध पत्र में माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह 'दिनकर' तथा मैथिलीशरण गुप्त की प्रतिनिधि रचनाओं के माध्यम से यह विश्लेषित किया गया है कि गीता के निष्काम कर्म, स्वधर्म, लोकसंग्रह और स्थितप्रज्ञ जैसी अवधारणाएँ इन कवियों की काव्य-चेतना में किस प्रकार रूपांतरित होकर राष्ट्रीय जागरण, बलिदान-भावना और कर्तव्य-बोध के रूप में अभिव्यक्त हुईं। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि चतुर्वेदी जी की 'पुष्प की अभिलाषा' अनासक्त बलिदान की, दिनकर के 'कुरुक्षेत्र' तथा 'रश्मिरथी' भाग्यवाद-खंडन एवं कर्मनिष्ठ स्वाभिमान की, तथा गुप्त जी के 'साकेत' और 'भारत-भारती' मौन कर्तव्यपालन एवं सामूहिक कर्म-चेतना की काव्यात्मक अभिव्यक्तियाँ हैं। तुलनात्मक विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि गीता का कर्मयोग आधुनिक हिंदी कविता की राष्ट्रीय काव्यधारा की वैचारिक रीढ़ रहा है, यद्यपि तीनों कवियों ने इसे भिन्न-भिन्न काव्य-मुहावरों में व्यक्त किया।

बीज शब्द: कर्मयोग, निष्काम कर्म, स्वधर्म, लोकसंग्रह, राष्ट्रीय चेतना, माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त, आधुनिक हिंदी कविता।

1. प्रस्तावना

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय चिंतन-परंपरा का वह अक्षय स्रोत है जिसने सदियों से न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन को, बल्कि सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक चेतना को भी दिशा दी है। गीता का सबसे मौलिक और क्रांतिकारी अवदान उसका कर्मयोग-सिद्धांत है, जो संन्यास और कर्म, प्रवृत्ति और निवृत्ति के बीच खड़े शाश्वत द्वंद्व का एक नवीन समाधान प्रस्तुत करता है। अर्जुन के विषाद से आरंभ होकर गीता यह स्थापित करती है कि कर्म से पलायन कोई विकल्प नहीं है; वास्तविक साधना कर्म के त्याग में नहीं, अपितु कर्मफल की आसक्ति के त्याग में निहित है। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' का यह उद्घोष केवल एक धार्मिक वाक्य नहीं, अपितु कर्तव्यनिष्ठ जीवन-दृष्टि की आधारशिला है।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध से लेकर बीसवीं सदी के मध्य तक का हिंदी काव्य-इतिहास औपनिवेशिक पराधीनता, सामाजिक जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन की पृष्ठभूमि में रचा गया। भारतेंदु युग से द्विवेदी युग होते हुए छायावाद-उत्तर राष्ट्रीय काव्यधारा तक की यात्रा में कवियों ने राष्ट्र-निर्माण के लिए एक ऐसी नैतिक भाषा खोजने का प्रयास किया जो व्यक्ति को निष्क्रिय भाग्यवाद से निकालकर सक्रिय, त्यागपूर्ण और निःस्वार्थ कर्म की ओर प्रवृत्त कर सके। इस खोज में गीता का कर्मयोग-दर्शन कवियों के लिए स्वाभाविक संबल बना, क्योंकि वह पलायनवादी वैराग्य को नकारते हुए संसार में सक्रिय रहकर कर्तव्यपालन की शिक्षा देता है - ठीक वही मनोवृत्ति जो एक पराधीन राष्ट्र को अपने भाग्य के पुनर्निर्माण हेतु आवश्यक थी।

इसी सांस्कृतिक-वैचारिक परिप्रेक्ष्य में माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह 'दिनकर' और मैथिलीशरण गुप्त की काव्य-साधना विशेष महत्व रखती है। तीनों कवि भिन्न काव्य-मुहावरों और भिन्न विधाओं में रचना करते हुए भी एक समान वैचारिक भूमि पर खड़े दिखाई देते हैं - वह भूमि है गीता का कर्मयोग। प्रस्तुत शोध पत्र इसी संबंध की पड़ताल करते हुए यह दर्शाने का प्रयास करता है कि किस प्रकार इन तीनों कवियों की प्रतिनिधि रचनाओं में गीता के निष्काम कर्म, स्वधर्म, लोकसंग्रह और स्थितप्रज्ञ जैसी अवधारणाएँ काव्यात्मक रूप ग्रहण करती हैं।

2. अध्ययन का उद्देश्य, महत्व एवं शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य यह अन्वेषित करना है कि श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मयोग-सिद्धांत ने आधुनिक हिंदी कविता, विशेषतः माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर तथा मैथिलीशरण गुप्त के काव्य को किस रूप में और किस सीमा तक प्रभावित किया। इसके अंतर्गत तीन उप-उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं: प्रथम, गीता के कर्मयोग-सिद्धांत के मूल तत्त्वों का सैद्धांतिक विवेचन करना; द्वितीय, चयनित तीनों कवियों की प्रतिनिधि रचनाओं में इन तत्त्वों की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का पाठ-केंद्रित विश्लेषण करना; तृतीय, तीनों कवियों के दृष्टिकोणों की तुलना करते हुए उनकी वैचारिक समानताओं और अभिव्यक्ति-गत भिन्नताओं को रेखांकित करना। यह अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण

है कि यह आधुनिक हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा के दार्शनिक आधार को स्पष्ट करता है और यह प्रमाणित करता है कि यह काव्यधारा केवल भावनात्मक देशभक्ति की उपज नहीं, अपितु एक सुगठित प्राचीन दार्शनिक परंपरा से पोषित थी।

शोध-प्रविधि की दृष्टि से यह अध्ययन गुणात्मक, विश्लेषणात्मक-वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोत के रूप में श्रीमद्भगवद्गीता का मूल पाठ तथा तीनों कवियों की प्रतिनिधि काव्य-कृतियाँ ली गई हैं, जबकि द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत गीता-भाष्य, आलोचनात्मक ग्रंथ एवं संबंधित शोध-पत्रों का उपयोग किया गया है। पाठ-विश्लेषण की पद्धति में विषयवस्तु-विश्लेषण को अपनाया गया है, जिसमें कवियों की रचनाओं में प्रयुक्त प्रतीकों, चरित्रों और वक्तव्यों को गीता के कर्मयोग-संबंधी अवधारणात्मक ढाँचे के सापेक्ष परखा गया है।

3. श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग: सैद्धांतिक स्वरूप

3.1 निष्काम कर्म की अवधारणा

गीता के कर्मयोग का केंद्रीय सूत्र निष्काम कर्म है - अर्थात् कर्मफल की आसक्ति से रहित होकर कर्तव्य-कर्म का सम्पादन। द्वितीय अध्याय के इस प्रसिद्ध श्लोक में कृष्ण अर्जुन को यही उपदेश देते हैं:

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (गीता, 2.47)

इस श्लोक में चार स्पष्ट निर्देश निहित हैं - कर्तव्य-कर्म का सम्पादन करो, फल की आकांक्षा मत रखो, स्वयं को कर्मफल का हेतु मत मानो, और अकर्म अर्थात् कर्तव्य से पलायन की प्रवृत्ति भी मत रखो। यहाँ यह ध्यातव्य है कि गीता कर्म-त्याग की नहीं, कर्मफल-आसक्ति के त्याग की शिक्षा देती है। यह भेद अत्यंत सूक्ष्म किंतु निर्णायक है, क्योंकि इसी के आधार पर गीता निष्क्रियता अथवा पलायनवादी वैराग्य को अस्वीकार करते हुए सक्रिय, संसार-स्थित कर्तव्यपालन को श्रेष्ठतम साधना घोषित करती है। तृतीय अध्याय, जो 'कर्मयोग' नाम से ही अभिहित है, में कृष्ण स्पष्ट कहते हैं कि कोई भी प्राणी क्षणमात्र भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता, अतः कर्म से भागना असंभव और अवांछनीय दोनों हैं।

3.2 स्वधर्म और लोकसंग्रह

कर्मयोग की दूसरी महत्वपूर्ण अवधारणा स्वधर्म है - अपनी प्रकृति, क्षमता और सामाजिक स्थिति के अनुरूप कर्तव्य का निर्वहन। गीता स्वधर्म की श्रेष्ठता को इस प्रकार प्रतिपादित करती है:

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥ (गीता, 18.47)

अर्थात् दोषयुक्त होते हुए भी अपना धर्म दूसरे के भलीभाँति अनुष्ठित धर्म से श्रेष्ठ है, क्योंकि स्वभावसिद्ध कर्म करने वाला पाप का भागी नहीं बनता। इसी के साथ जुड़ी है लोकसंग्रह की अवधारणा, जिसके अनुसार कर्म केवल आत्मोद्धार के लिए नहीं, अपितु समष्टि अथवा समाज के कल्याण के लिए भी किया जाना चाहिए। कृष्ण स्वयं का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि यद्यपि उनके लिए त्रिलोक में कुछ भी अप्राप्य नहीं, तथापि वे लोकसंग्रह की दृष्टि से कर्म में प्रवृत्त रहते हैं। यह अवधारणा आधुनिक राष्ट्रवादी काव्य के लिए विशेष रूप से उर्वर सिद्ध हुई, क्योंकि इसने व्यक्तिगत मुक्ति की कामना को सामूहिक, राष्ट्रीय कल्याण की भावना से जोड़ने का दार्शनिक आधार प्रदान किया।

3.3 स्थितप्रज्ञ की अवस्था और त्रिगुण-विवेचन

गीता कर्मयोगी के आदर्श स्वरूप को स्थितप्रज्ञ की संज्ञा देती है - वह व्यक्ति जो सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय में समभाव रखता है और हर्ष-शोक से विचलित नहीं होता। यह समत्व-बुद्धि ही कर्मयोग की कसौटी है, जिसके बिना निष्काम कर्म केवल एक आदर्श वाक्य बनकर रह जाता। साथ ही गीता कर्म की गुणवत्ता को सत्त्व, रजस् और तमस् - इन तीन गुणों के आधार पर विश्लेषित करती है। सात्त्विक कर्म वह है जो कर्तव्यबुद्धि से, आसक्ति और फलेच्छा से रहित होकर किया जाए; यही कर्म आदर्श कर्मयोगी की पहचान है। यह त्रिगुण-विवेचन आधुनिक कवियों के लिए मानवीय प्रेरणाओं के मूल्यांकन का एक सूक्ष्म कसौटी बना, जिसके सहारे उन्होंने वीरता, बलिदान और स्वार्थपरता के बीच भेद-रेखा खींची।

3.4 आधुनिक व्याख्याएँ: तिलक का 'गीता रहस्य' और गांधी का 'अनासक्ति योग'

गीता के कर्मयोग की आधुनिक, राष्ट्रवादी पुनर्व्याख्या में बाल गंगाधर तिलक और महात्मा गांधी का योगदान निर्णायक रहा है, और यही पुनर्व्याख्या हिंदी के राष्ट्रीय कवियों तक पहुँचने वाली वैचारिक कड़ी बनी। मांडले जेल में बंदी रहते हुए तिलक ने अपने ग्रंथ 'श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र' में यह प्रतिपादित किया कि गीता का मूल संदेश ज्ञान अथवा भक्ति की श्रेष्ठता नहीं, अपितु निष्काम कर्मयोग की सर्वोपरिता है, और यह कि निःस्वार्थ भाव से किया गया सक्रिय कर्म ही मोक्ष का सर्वश्रेष्ठ साधन है। इस व्याख्या ने पराधीन भारत में सशक्त राजनीतिक कर्म को नैतिक वैधता प्रदान की। इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए गांधी जी ने अपने भाष्य 'अनासक्ति योग' में गीता को अहिंसा और निष्काम सेवा के सिद्धांत से जोड़ा, और सत्याग्रह को ही युगानुकूल निष्काम कर्म के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों में गीता एक पूजा-ग्रंथ मात्र न रहकर राष्ट्रीय कर्तव्य-बोध और सक्रिय राष्ट्र-सेवा की प्रेरणा-पुस्तिका के रूप में प्रतिष्ठित हुई - और

यही सांस्कृतिक वातावरण था जिसमें चतुर्वेदी, दिनकर और गुप्त जी की काव्य-चेतना का विकास हुआ।

4. आधुनिक हिंदी कविता की पृष्ठभूमि में कर्मयोग का सांस्कृतिक प्रवेश

द्विवेदी युग से लेकर छायावादोत्तर काल तक हिंदी कविता ने क्रमशः श्रृंगारिकता से हटकर राष्ट्रीय एवं सामाजिक सरोकारों की ओर गति की। यह वह दौर था जब कविता को केवल सौंदर्यबोध का माध्यम नहीं, अपितु जन-जागरण और चरित्र-निर्माण का सशक्त उपकरण माना जाने लगा। ऐसे में गीता के कर्मयोग-दर्शन ने कवियों को एक ऐसी नैतिक शब्दावली और प्रतीक-व्यवस्था प्रदान की जिसके सहारे वे पराधीनता के विरुद्ध सक्रिय संघर्ष का आह्वान करते हुए भी उसे स्वार्थ, प्रतिशोध या व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से मुक्त, एक उदात्त कर्तव्य-भावना के रूप में प्रस्तुत कर सकें। भाग्यवाद, नियतिवाद और निष्क्रिय आत्मसमर्पण की प्रवृत्तियों को गीता के आलोक में अस्वीकार करना इस काव्यधारा की केंद्रीय विशेषता बन गई।

माखनलाल चतुर्वेदी, दिनकर और मैथिलीशरण गुप्त - तीनों ही इस राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रतिनिधि स्तंभ माने जाते हैं। तीनों प्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता आंदोलन से संबद्ध रहे - चतुर्वेदी सत्याग्रह में कारावास भोगते रहे, गुप्त जी को स्वयं गांधी जी ने 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दी, और दिनकर की काव्य-वाणी को स्वतंत्र भारत में राष्ट्रीय अंतरात्मा की अभिव्यक्ति के रूप में सम्मान मिला। इस समान राजनीतिक-सांस्कृतिक भूमि पर खड़े होकर भी तीनों ने गीता के कर्मयोग को भिन्न-भिन्न काव्य-रूपों - प्रतीकात्मक गीत, महाकाव्यात्मक संवाद और कथात्मक खंडकाव्य - में ढाला, जिसका विश्लेषण आगे के अनुभागों में प्रस्तुत है।

5. माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में कर्मयोग

5.1 कवि-जीवन और सक्रिय कर्म की एकता

माखनलाल चतुर्वेदी (1889-1968) का जीवन स्वयं में कर्मयोग का एक जीवंत प्रमाण है। पत्रकारिता के क्षेत्र में 'प्रभा' और 'कर्मवीर' जैसी पत्रिकाओं के संपादन से लेकर 1920 के असहयोग आंदोलन और 1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन में कारावास भोगने तक, उन्होंने सदैव फल की चिंता किए बिना कर्तव्य-पालन को वरीयता दी। 1967 में भाषा-नीति के विरोध में पद्मभूषण सम्मान लौटा देना उनकी उसी निष्काम, निर्भीक कर्मनिष्ठा का प्रमाण है, जिसमें व्यक्तिगत सम्मान की अपेक्षा सिद्धांत को प्राथमिकता दी गई। उनकी कविता इसी जीवन-दृष्टि का काव्यात्मक विस्तार है।

5.2 'पुष्प की अभिलाषा': अनासक्त बलिदान की काव्य-प्रतिमा

चतुर्वेदी जी की सर्वाधिक चर्चित और पाठ्यक्रमों में सम्मिलित कविता 'पुष्प की अभिलाषा' गीता के निष्काम कर्म-सिद्धांत का एक अत्यंत सुंदर काव्यात्मक रूपांतरण प्रस्तुत करती है। इस कविता में

एक पुष्प अपनी अभिलाषा व्यक्त करता है, किंतु यह अभिलाषा पारंपरिक अर्थों में महत्वाकांक्षा नहीं, अपितु उसका ठीक विपरीत है। पुष्प देवताओं के शीश पर चढ़ने, सम्राटों के मुकुट में गुँथे जाने अथवा प्रेमी-प्रेमिका के गजरे में स्थान पाने जैसी सामान्य, स्वाभाविक कामनाओं को अस्वीकार कर देता है - ये सभी वे 'फल' हैं जिनकी आसक्ति गीता वर्जित करती है। इसके विपरीत, पुष्प यह चाहता है कि माली उसे तोड़कर उस मार्ग पर बिखेर दे जिस मार्ग से होकर मातृभूमि पर अपना शीश अर्पित करने वाले वीर सैनिक गुजरते हैं। यहाँ बलिदान की कामना है, किंतु वह कामना भी निजी यश अथवा प्रतिष्ठा से नहीं, अपितु राष्ट्र-सेवा के लोकसंग्रहकारी भाव से प्रेरित है। पुष्प का यह चयन ठीक गीता के उस निर्देश के अनुरूप है जिसमें कर्ता को कर्मफल का हेतु न बनकर केवल कर्तव्य के प्रति समर्पित रहने को कहा गया है। संक्षेप में, यह लघु कविता आत्म-विसर्जन के माध्यम से सामूहिक कल्याण की सेवा करने के भाव को - अर्थात् लोकसंग्रह-प्रेरित निष्काम कर्म को - अत्यंत सहज, प्रतीकात्मक भाषा में व्यक्त करती है।

5.3 'हिम किरीटिनी' और 'हिम तरंगिनी': राष्ट्र-सेवा की कर्मशील चेतना

चतुर्वेदी जी के काव्य-संग्रह 'हिम किरीटिनी' (देव पुरस्कार से सम्मानित) तथा 'हिम तरंगिनी' (हिंदी को प्रथम साहित्य अकादमी पुरस्कार दिलाने वाला संग्रह) में भी यही कर्मशील राष्ट्रचेतना प्रवाहित होती है। इन संग्रहों की कविताओं में हिमालय, नदी और प्रकृति के भव्य बिंब राष्ट्रीय अस्मिता और अजेय कर्मशक्ति के प्रतीक बनकर उभरते हैं। कवि यहाँ भी त्याग, संघर्ष और आत्म-बलिदान को आदर्श मानते हुए निष्क्रिय भाग्यवाद के प्रति अपनी अस्वीकृति दर्शाता है। इन रचनाओं में शब्द-चयन एवं भाव-सृष्टि में गीता की वह मूल भावना अंतर्निहित है कि सच्चा पुरुषार्थ भोग या विश्राम में नहीं, अपितु निरंतर, निःस्वार्थ कर्मशीलता में निहित है।

6. रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य में कर्मयोग

6.1 'कुरुक्षेत्र' में भाग्यवाद का खंडन और कर्म की प्रतिष्ठा

दिनकर (1908-1974) का दार्शनिक खंडकाव्य 'कुरुक्षेत्र' महाभारत के युद्धोत्तर प्रसंग को आधार बनाकर युधिष्ठिर और भीष्म के बीच धर्म, राजनीति और मानव-कर्तव्य पर गहन संवाद प्रस्तुत करता है। गीता में जहाँ कृष्ण-अर्जुन संवाद युद्ध के पूर्व अर्जुन के विषाद के समाधान हेतु होता है, वहीं दिनकर युद्धोपरांत की परिस्थिति में कर्म की अनिवार्यता और भाग्यवाद के खतरों पर विचार करते हैं। कवि भाग्यवाद को शोषण और अन्याय का आवरण मानते हुए स्पष्ट शब्दों में कहते हैं:

भाग्यवाद आवरण पाप का, और शस्त्र शोषण का।

(दिनकर, 'कुरुक्षेत्र')

यह पंक्ति गीता के उस मूल सिद्धांत की ही आधुनिक, राजनीतिक पुनर्अभिव्यक्ति है जिसमें अकर्मण्यता को अस्वीकार्य बताया गया है - क्योंकि निष्क्रियता को नियति अथवा भाग्य का नाम देकर सामाजिक अन्याय और शोषण को वैधता प्रदान की जाती रही है। इसी क्रम में दिनकर मनुष्य के जीवन-प्रयोजन को केवल आत्म-मुक्ति तक सीमित न रखकर लोकसंग्रहकारी सेवा से जोड़ते हैं, जैसा कि यह पंक्ति दर्शाती है - 'दीपक का निर्वाण बड़ा कुछ श्रेय नहीं जीवन का, जितना कि उसका जलना, और अंधकार को हरना।' दीपक के जलने और अंधकार दूर करने का यह रूपक ठीक उसी लोकसंग्रह-भावना को प्रतिध्वनित करता है जिसका उपदेश गीता कर्मयोगी को देती है - अर्थात् कर्म केवल आत्म-केंद्रित उपलब्धि के लिए नहीं, बल्कि संसार के अंधकार को दूर करने, अर्थात् समाज-कल्याण के लिए किया जाना चाहिए।

6.2 'रश्मिरथी' में कर्ण: जन्म नहीं, कर्म की श्रेष्ठता

दिनकर के सात सर्गों में रचित खंडकाव्य 'रश्मिरथी' का नायक कर्ण महाभारत के परंपरागत निरूपण से आगे बढ़कर एक ऐसे चरित्र के रूप में प्रस्तुत होता है जो जन्म-आधारित वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध कर्म-आधारित गरिमा का प्रतिनिधित्व करता है। द्रोण द्वारा अस्वीकृति, परशुराम का शाप, कुंती से विलगाव और दुर्योधन के प्रति निष्ठा जैसे प्रसंगों से गुजरता हुआ कर्ण अपने कुल अथवा जाति से नहीं, अपने पराक्रम और औदार्य से अपनी पहचान गढ़ता है। कवि कर्ण के मुख से यह उद्घोष करवाते हैं:

जाति-जाति रटते जिनको आती है लाज, न आती है मुझको जो हूँ
स्वजाति-निरपेक्ष।

(भाव-रूपांतरण, दिनकर 'रश्मिरथी', तृतीय सर्ग - कर्ण का कृष्ण को उत्तर)

यहाँ यह ध्यातव्य है कि गीता स्वयं वर्ण-व्यवस्था को जन्म पर नहीं, गुण और कर्म पर आधारित बताती है ('चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः', गीता 4.13)। दिनकर कर्ण के चरित्र के माध्यम से इसी सिद्धांत को अत्यंत मार्मिक ढंग से पुनर्जीवित करते हैं - कर्ण की सूतपुत्र के रूप में जन्मी हुई सामाजिक हीनता उसके कर्मों की महानता के आगे निरर्थक हो जाती है। कर्ण का उदार दान, अपने वचन के प्रति अटूट निष्ठा, और प्रतिकूलतम परिस्थितियों में भी स्वाभिमान की रक्षा - ये सभी गुण उसे गीता के उस कर्मयोगी के निकट ले जाते हैं जो परिस्थिति और सामाजिक निर्णय की परवाह किए बिना अपने स्वधर्म का पालन करता है। साथ ही, नागास्त्र के प्रयोग से इनकार कर देना और अंत तक अपने सिद्धांतों पर अडिग रहना यह दर्शाता है कि कर्ण के लिए विजय से अधिक महत्वपूर्ण कर्तव्य के प्रति निष्ठा है - जो कि निष्काम कर्म की ही एक वीर-गाथात्मक अभिव्यक्ति है।

6.3 'परशुराम की प्रतीक्षा': सक्रिय प्रतिकार का आह्वान

दिनकर की काव्य-रचना 'परशुराम की प्रतीक्षा' अन्याय और शोषण के विरुद्ध सक्रिय प्रतिकार का प्रबल आह्वान करती है। यह रचना गीता के उस निर्देश की याद दिलाती है जिसमें कहा गया है कि जो केवल इंद्रियों को वश में करके मन ही मन विषयों का चिंतन करता रहता है, वह मिथ्याचारी है, जबकि श्रेष्ठ वह है जो मन से इंद्रियों को वश में रखते हुए कर्मयोग का आचरण करता है (गीता, 3.6-3.7)। दिनकर की यह रचना अन्याय के समक्ष निष्क्रिय सहनशीलता को अस्वीकार करते हुए यह प्रतिपादित करती है कि उचित समय पर, उचित कारण से किया गया प्रतिकार भी कर्मयोग का ही एक रूप है - बशर्ते वह व्यक्तिगत द्वेष से नहीं, न्याय की स्थापना के उद्देश्य से प्रेरित हो।

7. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में कर्मयोग

7.1 'साकेत' में उर्मिला का मौन कर्म और अनासक्त त्याग

मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964), जिन्हें स्वयं महात्मा गांधी ने 'राष्ट्रकवि' की उपाधि प्रदान की, ने अपने महाकाव्य 'साकेत' में रामकथा के उपेक्षित चरित्रों को केंद्र में लाकर एक नई नैतिक दृष्टि प्रस्तुत की। इस महाकाव्य में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला का चरित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो चौदह वर्षों तक बिना किसी शिकायत, बिना यश की कामना के अपने कर्तव्य का निर्वहन करती है। उर्मिला का यह मौन तप कहीं भी आत्म-प्रदर्शन अथवा मान्यता की खोज नहीं करता - यह ठीक उसी निष्काम कर्म का प्रतिरूप है जिसमें कर्ता कर्तव्य का पालन तो करता है, किंतु कर्मफल की अथवा सामाजिक स्वीकृति की आसक्ति से मुक्त रहता है। गुप्त जी ने इस प्रकार त्याग और कर्तव्यनिष्ठा को केवल वीरतापूर्ण, सार्वजनिक कर्मों तक सीमित न रखकर पारिवारिक-सामाजिक जीवन के अंतरंग, अदृश्य क्षेत्र तक विस्तारित किया - यह गीता के कर्मयोग की एक व्यापक, समावेशी व्याख्या है।

7.2 'यशोधरा' में कर्तव्य, करुणा और आत्मसंयम

'यशोधरा' खंडकाव्य में गुप्त जी सिद्धार्थ की पत्नी यशोधरा के आंतरिक द्वंद्व और उसके पश्चात्तर्वर्ती जीवन को चित्रित करते हैं। पति के गृहत्याग के उपरांत यशोधरा क्रोध अथवा विद्रोह का मार्ग नहीं अपनाती, अपितु करुणा, संयम और गरिमा के साथ अपने जीवन-कर्तव्यों का निर्वहन करती रहती है। इस चरित्र-चित्रण में कवि यह प्रश्न भी उठाते हैं कि क्या व्यक्तिगत मोक्ष की खोज में परिजनों के प्रति कर्तव्य का परित्याग उचित है - यह प्रश्न सीधे गीता के उस विमर्श से जुड़ा है जिसमें सन्यास और कर्मयोग की तुलना करते हुए कृष्ण यह स्पष्ट करते हैं कि कर्मयोग सन्यास से श्रेष्ठ है, क्योंकि विशुद्ध कर्म-सन्यास कठिन और प्रायः अपूर्ण होता है, जबकि कर्मयोगी संसार में रहते हुए भी अनासक्त रह सकता है। यशोधरा का चरित्र इसी अनासक्त, संसार-स्थित कर्तव्यपालन का स्त्री-दृष्टिकोण से किया गया मार्मिक चित्रण है।

7.3 'भारत-भारती' में सामूहिक कर्मचेतना का आह्वान

1912 में प्रकाशित 'भारत-भारती' गुप्त जी की वह रचना है जिसने स्वतंत्रता आंदोलन की पीढ़ियों को गहराई से प्रभावित किया। इस काव्य में भारत के गौरवशाली अतीत का स्मरण कराते हुए कवि वर्तमान की दुर्दशा पर गहरी वेदना व्यक्त करते हैं, किंतु यह वेदना निराशा में परिणत नहीं होती - अपितु यह राष्ट्र को पुनः सक्रिय, संगठित कर्म की ओर प्रेरित करने का आह्वान बन जाती है। यहाँ व्यक्तिगत विलाप के स्थान पर सामूहिक कर्तव्य-बोध को प्रतिष्ठित किया गया है, जो लोकसंग्रह की गीतोक्त अवधारणा का ही सामाजिक-राष्ट्रीय विस्तार है। गुप्त जी के अनुसार राष्ट्र का उत्थान किसी दैवी हस्तक्षेप अथवा भाग्य के परिवर्तन से नहीं, अपितु प्रत्येक नागरिक द्वारा किए गए निष्ठापूर्ण, संगठित कर्म से ही संभव है।

8. तुलनात्मक विवेचन: तीनों कवियों में कर्मयोग की भिन्न अभिव्यक्तियाँ

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि माखनलाल चतुर्वेदी, दिनकर और मैथिलीशरण गुप्त - तीनों कवि गीता के कर्मयोग-दर्शन को एक समान वैचारिक स्रोत के रूप में ग्रहण करते हुए भी उसे भिन्न-भिन्न काव्य-मुहावरों में अभिव्यक्त करते हैं। चतुर्वेदी जी का माध्यम मुख्यतः गीतात्मक और प्रतीकात्मक है - 'पुष्प की अभिलाषा' जैसी लघु कविताओं में वे प्रकृति के सहज बिंबों के माध्यम से अनासक्त बलिदान की भावना को संक्षिप्त, किंतु अत्यंत प्रभावी ढंग से व्यक्त करते हैं। इसके विपरीत, दिनकर का माध्यम महाकाव्यात्मक, तार्किक और संवादात्मक है - 'कुरुक्षेत्र' और 'रश्मिरथी' में वे पौराणिक चरित्रों के मध्य दार्शनिक बहस के माध्यम से भाग्यवाद के विरुद्ध कर्म की प्रतिष्ठा और जन्म के विरुद्ध कर्म की सर्वोच्चता को स्थापित करते हैं। गुप्त जी की पद्धति इन दोनों से भिन्न, कथात्मक और अंतर्मुखी है - वे उर्मिला और यशोधरा जैसे स्त्री-चरित्रों के माध्यम से कर्तव्यनिष्ठा के उस मौन, अदृश्य किंतु अत्यंत गहन आयाम को उद्घाटित करते हैं जो सार्वजनिक वीरता के शोरगुल से परे, घर की चौखट के भीतर घटित होता है।

इन भिन्नताओं के बावजूद तीनों कवियों में एक गहरा वैचारिक सामंजस्य विद्यमान है। पहला, तीनों ही निष्क्रिय भाग्यवाद और पलायनवादी वैराग्य को अस्वीकार करते हैं और संसार में स्थित रहकर कर्तव्यपालन को ही सच्चा धर्म मानते हैं। दूसरा, तीनों के काव्य में कर्म का प्रयोजन व्यक्तिगत यश अथवा लाभ नहीं, अपितु लोकसंग्रह अथवा राष्ट्र-कल्याण है - चाहे वह पुष्प का बलिदान हो, कर्ण का दान हो, अथवा उर्मिला का मौन त्याग। तीसरा, तीनों कवि गीता की इस मूल अंतर्दृष्टि को पुनःप्रस्तुत करते हैं कि सामाजिक स्थिति, जन्म अथवा परिस्थिति व्यक्ति के नैतिक मूल्य को निर्धारित नहीं करती - यह निर्धारित होता है उसके कर्मों की गुणवत्ता से। इस प्रकार गीता का कर्मयोग इन तीनों कवियों के हाथों में एक ऐसा उपकरण बनकर उभरता है जिसके माध्यम से पराधीन राष्ट्र को कर्तव्यनिष्ठ, निःस्वार्थ और संगठित कर्म हेतु आध्यात्मिक-नैतिक वैधता प्रदान की गई।

9. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग-सिद्धांत केवल एक प्राचीन दार्शनिक उपदेश नहीं रहा, अपितु वह आधुनिक हिंदी कविता, विशेषतः राष्ट्रीय काव्यधारा की वैचारिक रीढ़ बना। माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर और मैथिलीशरण गुप्त - तीनों ही कवियों ने अपनी-अपनी शैली और माध्यम में निष्काम कर्म, स्वधर्म और लोकसंग्रह जैसी गीतोक्त अवधारणाओं को काव्यात्मक जीवन प्रदान किया। चतुर्वेदी जी ने प्रकृति के प्रतीकों में अनासक्त बलिदान को, दिनकर ने पौराणिक संवाद और वीर-चरित्रों में भाग्यवाद-खंडन तथा कर्म-आधारित गरिमा को, और गुप्त जी ने स्त्री-चरित्रों के मौन तप में कर्तव्यनिष्ठा के अंतरंग आयाम को मूर्त किया। यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि गीता के कर्मयोग और आधुनिक हिंदी कविता के मध्य संबंध केवल आकस्मिक सांस्कृतिक प्रभाव नहीं, अपितु एक सुविचारित, गहन वैचारिक निरंतरता है, जिसने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को आवश्यक नैतिक और आध्यात्मिक बल प्रदान किया। भविष्य के शोध हेतु यह क्षेत्र इस दिशा में और विस्तारित किया जा सकता है कि सुभद्रा कुमारी चौहान, रामनरेश त्रिपाठी, तथा हरिवंश राय बच्चन जैसे अन्य समकालीन एवं परवर्ती कवियों के काव्य में भी गीता के कर्मयोग की अभिव्यक्ति का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए, जिससे इस वैचारिक परंपरा की व्यापकता और अधिक स्पष्टता से रेखांकित हो सके।

संदर्भ सूची

1. श्रीमद्भगवद्गीता (मूल संस्कृत पाठ एवं हिंदी अनुवाद सहित), गीता प्रेस, गोरखपुर अथवा किसी भी मानक टीकाकृत संस्करण से उद्धृत।
2. तिलक, बाल गंगाधर। श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र।
3. गांधी, मोहनदास करमचंद। अनासक्ति योग (गीता पर भाष्य)।
4. चतुर्वेदी, माखनलाल। हिम किरीटिनी।
5. चतुर्वेदी, माखनलाल। हिम तरंगिनी।
6. चतुर्वेदी, माखनलाल। 'पुष्प की अभिलाषा', कविता कोश। <https://kavitakosh.org>
7. दिनकर, रामधारी सिंह। कुरुक्षेत्र।
8. दिनकर, रामधारी सिंह। रश्मिरथी।
9. दिनकर, रामधारी सिंह। परशुराम की प्रतीक्षा।
10. गुप्त, मैथिलीशरण। साकेत।
11. गुप्त, मैथिलीशरण। यशोधरा।
12. गुप्त, मैथिलीशरण। भारत-भारती।
13. Kulkarni, Smita Pandurang & Kushwaha, Jayaram. "निष्काम कर्मयोग की दार्शनिक अवधारणा और आधुनिक प्रासंगिकता: एक अध्ययन।" Divyayatan - A Journal of Lakulish Yoga University, Vol. 3, No. 2 (2026), pp. 15-19.
<https://divyayatan.lyu.ac.in/index.php/divyayatan/article/view/111>
14. "Karma Yoga (Bhagavad Gita)." Wikipedia.
[https://en.wikipedia.org/wiki/Karma_Yoga_\(Bhagavad_Gita\)](https://en.wikipedia.org/wiki/Karma_Yoga_(Bhagavad_Gita))
15. "माखनलाल चतुर्वेदी।" हिंदी विकिपीडिया।
https://hi.wikipedia.org/wiki/माखनलाल_चतुर्वेदी
16. "मैथिलीशरण गुप्त।" हिंदी विकिपीडिया। https://hi.wikipedia.org/wiki/मैथिलीशरण_गुप्त
17. "रामधारी सिंह 'दिनकर'।" भारतकोश।
https://bharatdiscovery.org/india/रामधारी_सिंह_'दिनकर_'
18. "कुरुक्षेत्र -रामधारी सिंह दिनकर।" भारतकोश।
https://bharatdiscovery.org/india/कुरुक्षेत्र_-रामधारी_सिंह_दिनकर
19. "रश्मिरथी (खंड काव्य)।" हिंदी विकिपीडिया। [https://hi.wikipedia.org/wiki/रश्मिरथी_\(खंडकाव्य\)](https://hi.wikipedia.org/wiki/रश्मिरथी_(खंडकाव्य))